* श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी *

श्रीगणेशाय नमः

श्रीतुलसीदासजीका जीवनचरित्र

श्रीगोस्वामि तुलसीदासजी राजापुर ग्राम जिला बांदा के निवास करनेवाले सरयूपारी ब्राह्मणथे। इनका गोत्र पाराशर और आस्पद् द्विवेदीथा, इनके पिता का नाम 'आत्माराम द्विवेदी' और माता का नाम 'हुलसी' था इनका जन्म विक्रमीय संवत् १५८९ में हुआ परन्तु इनका जन्म मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में होने के कारण शास्त्र मर्यादा के भयसे इनके माता पिता ने त्याग दिया क्योंकि मुहूर्तचिंतामणि में लिखाहै कि-

अथोचुरन्ये प्रथमाष्ट घट्यो मूलस्य शाक्रान्तिमपञ्चनाड्यः।
जातंशिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्टसमान पश्येत्॥

अर्थात् मूलके आदिकी आठघटी और ज्येष्ठाके अन्तकी पांचघटी इसप्रकार १३घटी परिमित कालको अभुक्तमूल कहते हैं ऐसे समयमें उत्पन्न होनेवाले पुत्रको पितात्याग देवे अथवा आठवर्ष पर्यंत उसका मुख न देखे तदनुसार शास्त्राचारको प्रधान मानने वाले आत्माराम द्विवेदी ने पुत्र जन्मोत्सव का आनन्द भुलाकर शास्त्र की आज्ञानुसार अपने प्रिय पुत्र का सदाके लिये त्याग करनाही अपने लिए कल्याणकारक समझा यह वात तुलसीदासजी की विनयपत्रिका से सूचित होती है-

जननिजनक तज्यो जनमि करम बिन विधिहू सिरज्यो अवडेरे।

इसपदसे भली भाँति प्रमाण होता है कि मेरे माता पिताने जन्महीसे मुझे तजदिया था और विधाताने भी मुझे भाग्यहीन रचाथा माता पिताके त्याग देनेपर गुसाँईजी को महात्मानृसिंहदासजी नामक साधू इनको अनाथदीनजान दयायुक्तहोकर अपनेआश्रम वराहक्षेत्रमें लेगए और भली भाँति दैवप्रेरणासे उनका पालन पोषण किया वालकपनहीसे उक्तसाधुने तुलसीदासजीको रामकथाका प्रेमी वनाया और वह महात्मावाल्यावस्था में इनको रामवोला नाम से पुकारा करते थे जव ये कुछ सचेत और सावधान हुए तव गुरुदीक्षा देकर उन्होंने इनको अपना शिष्य वनाया और सम्प्रदायानुसार विधिपूर्वक संस्कार करके इनका नाम तुलसीदास रक्खा तव से यह इसी नाम से प्रसिद्ध हुए और उसी समय वहाँही उन्हीं महात्मा के श्रीमुखसे इन्होंने रामकथा भी सुनीथी जो प्रकरण वालकाण्ड में लिखा है कि-

मैंपुनि निज गुरुसनसुनी, कथासुसूकर खेत।

समुझनहीं तसुवालपन, तबअति रहेउँअचेत ॥
वन्दौं गुरुपदकंज, कृपासिंधु नररूपहरि ।

इस सोरठा में गोसाईंजी ने अपने गुरुका नाम जो नृसिंहदासजीथा वंदना में स्पष्ट इसकारण से नहीं कहा कि धर्मशास्त्र में गुरु आदि का नाम स्पष्ट उच्चारण करना वर्जित है यथा-

आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्यच ।
श्रेयस्कामोन गृह्णीयाज्जेष्ठापत्यकलत्रयोः ॥

अर्थात् शुभकी इच्छा करनेवाले पुरुषों को अपना नाम गुरुकानाम अतिकृपण का नाम तथा ज्येष्ठ पुत्र और स्त्री का नाम न लेना चाहिए । उसी प्रान्त में एक रामोपासक महात्मा दीनबन्धुनामक पाठकजी रहते थे इन के एक अति सुशीला परमपुनीत रत्नावली नामक कन्याथी, अपने पिता का आचरण देख तथा उनकी शिक्षानुसार अपने हृदय में उसने भी श्रीरामचन्द्रजी के परम प्रेम को धारण कर लियाथा इस सुशीला में विद्यासंपन्न ईश्वर की भक्ति होने से स्वर्ण में सुगन्धकी समान प्रतीत होतीथी, जब यह कन्या व्याहने योग्य हुई तब इसके पिताने तुलसीदासजी को योग्य वर जान आनन्दपूर्वक विवाह करदिया । पति में प्रेम करनेवाली सुशीला रत्नावली निरंतर पति सेवा में तत्पर रहतीथी इसकारण तुलसीदासजी का भी अधिक प्रेम होता हुआ, कईवार गोसाईंजी के श्वसुर ने अपनी पुत्री को बुलाया परन्तु तुलसीदासजी ने अधिक प्रीति होने के कारण जाने न दिया अंत में गोसाईंजी का साला अपनी भगनी को बुलाने आया तिसपरभी नहीं भेजते थे तब एक दिन गोसाईंजी किसी कार्य को गए हुए थे—उनकी स्त्री अपने भाई के साथ छिपकर विना अपने पति की आज्ञा के अपने पिता के गृह चली गई ।

वाहरसे लौट आनेपर जब गोसाईंजीने स्त्री को न देखा तब निकट वासियोंसे पूछने पर प्रतीत हुआ कि अपने भाई के साथ चलीगई तब प्रेमवश हो के अपनी ससुराल को गए अभी स्त्री अपने पिता के घर पहुंचकर अपने संबधियों से मिलने भी नहीं पाई थी कि इतनेमें आपभी पहुँचगए गोसाईंजी को देखते ही स्त्री अति लज्जित हुई और बाल्यावस्था से उसका भी श्रीरामजी के विषय अतिप्रेम था इस कारण अत्यन्त दुःखित हो वैराग्य पूर्वक वचन बोली

दो०—लाज न लागत आपको दौरेआयहु साथ ।
धिक् धिक् ऐसे प्रेमको, कहा कहौं मैंनाथ ॥
अस्थि चर्ममयदेह मम तासों जैसी प्रीति ।

तैसी जो श्रीराम से होत न ते भवभीत ॥

अर्थात् आप को लज्जा नहीं आती है आप मेरे साथही साथ दौडे चलेआये, हे स्वामी! आप से क्या कहूं ऐसे प्रेम को धिक्कार है मेरे इस हाड़मास के शरीरमें जितना आप का प्रेम है उतना यदि श्रीरामचन्द्रजी के चरणकमलों में होवे तो इस जन्म मरण रूप संसार के भय से शीघ्रही छूट जाओ स्त्री के मुख से ऐसे वैराग्य पूर्वक शुद्ध वचन सुनतेही निर्मल अंतःकरण होने के कारण गोसाईजी को अत्यन्त वैराग्य होगया और उसी समय स्थानादि का त्याग कर काशीपुरी में वास करने लगे और ईश्वर के आराधन में तत्पर हुए। तुलसीदासजी जब प्रातःकाल मलमूत्र त्यागकरने जाया करै थे तब शौच से वचेहुए जल को एक बबूल के वृक्ष की जड़ में नियम से डाल दिया करैथे एक दिन शौचक्रिया से जल शेष रखना भूलगए उस वृक्ष के समीप आनेपर अपनी भूल का स्मरण कर पश्चाताप करने लगे इतने ही में उस वृक्ष से एक प्रेत निकल कर बोला। गोस्वामीजी! आप चिंता क्यों करते हैं आपके नित्य जलदान से मैं अत्यंत संतुष्ट हुआ हूं आप की जो इच्छा हो सो वर मांगलीजिए इन्होंने अपने को परम प्रिय श्रीरामचंद्रजी महाराज का दर्शन मांगा उसने हँसकर कहा--कि महाराज! यदि मैं इस योग्य होता तो इस निन्दित प्रेत योनि को क्यों धारण किये रहता। यद्यपि इस पाप योनिमें यह सामर्थ्य नहीं कि श्रीरामचन्द्रजी का दर्शन करादूं तथापि एक उपाय आपको बताताहूं उससे आपका अभीष्ट अवश्य सिद्ध होजायगा वह उपाय यह है कि-यहां कर्णघंटा पर नित्य प्रति श्रीरामकथा होती है उस के श्रवण के निमित्त हनुमानजी अतिदरिद्री कोढी का सा महाघृणितरूप धारणकर नियमपूर्वक नियत समयपर आते हैं यदि एकांत में उन के चरणों में प्रेमपूर्वक हठ से लिपट जावोगे तो वह कृपा करके श्रीमहाराज का दर्शन तुम्हें अवश्य करादेंगे।

यह सुन उस प्रेत के कथनानुसार नियत समय पर रामायण की कथा श्रवण करनेलगे कथा विसर्जन होनेपर एकाकी अपने स्थान को जाते हुए उस प्रेत के सूचना करेहुए चिन्होंको पहिचान कर हनुमान्जी के चरणों में जाकर लिपटगए और हनुमानजी के छुड़ानेपर भी उन के चरणों को नहीं छोड़ते हुए इस प्रकार इन की आन्तरीय दृढता और दृढभक्ति को देखकर हनुमान्जी चित्त में अति प्रसन्न हुए और कृपाकर बोले कि-क्या चाहता है, गोस्वामीजी ने कहा कि महाराज! श्री रामजी का दर्शन चाहता हूं ऐसा प्रेमयुक्त वचन सुन हनुमान्जी ने हर्षसे गद्गदहो श्री शिवमंत्र का उपदेश देकर कहा कि चित्रकूट जाकर इसका साधन करो।

छः मास के अनन्तर श्री 'रामदर्शन' प्राप्त होगा ऐसे हनुमानजी के कथन को शिरसे स्वीकार कर गोस्वामी जी ने काशीजी से चित्रकूट को प्रस्थान किया

मार्ग में चंद्रचूड श्री शिवजी महाराज दण्डीस्वामी का रूपधारणकर तुलसीदासजी को मिले और पूछने लगे कि क्यों गोस्वामीजी इस समय किसकारण से कहाँको जारहे हो—उन्होंने कहाकि रामचन्द्रजी के दर्शन की अभिलाषा से चित्रकूट जाने का विचार है शिवजी ने कहाकि तुम्हारा मनोरथ अभी सिद्ध न होगा यह कह अपना साक्षात् स्वरूप प्रकट किया प्रियदर्शन शिवजी का दुर्लभ दर्शन पाय गोसाईंजी अत्यंत हर्षित हो वारंवार स्तुति कर प्रणाम करके प्रार्थना करने लगे कि-जब आपकी मुझपर पूर्ण कृपा है तो अब मुझे राम दर्शन अवश्य होगा क्योंकि महा प्रभु श्रीरामचंद्रजीका नारद मुनि के प्रति यह वचन है कि—

'जापर कृपा न करैं पुरारी—सो न पाव मुनि भक्ति हमारी' ऐसी विनय सुन श्रीमहादेवजी अति प्रसन्न हुए और तथास्तु ऐसा वरदे अंतर्ध्यान होगये और इन्हों ने अपनी चित्रकूट को यात्रा करी तदनन्तर चित्रकूट पहुंच रामघाट पर निवास किया वहाँ हनूमान्‌जी की शिक्षानुसार शिवमंत्र का जप करते रहे निदान एक दिन किसी वनकी ओर चले गए तो अकस्मात् वहाँपर क्या देखा कि अश्वारूढ दो परम सुन्दर तरुण पुरुष धनुष बाण धारण करे मृगया खेलते हुए आगे चले जारहे हैं यह देख उनको मृगयासक्त प्राकृत पुरुष जान उनकी ओर से अपनी दृष्टि हटाली इतनेही में हनुमान्‌जी ने प्रकट होकर कहाकि तुलसीदास तुम्हें श्रीमहाराज के दर्शन हुए? यह सुन गोस्वामीजी अत्यंत पश्चात्ताप कर बोले मैंने तो प्रभुको पहिचाना नहीं इसकारण उनकी ओरसे दृष्टि हटाली इतना कह हर्ष से गद्गद हो यह पद बनाय गानेलगे।

'लोचन रहे वैरी होय।
जानबूझ अकाज कीन्हो, गये भूमें गोय।
अविगति जो तेरी गति न जान्यो रह्यों जागत सोय॥
सबै छवि की अवधि में हैं निकसिगे ढिंगहोय।
कर्म हीन मैं पाय हीरा दयो पल में खोय॥
दासतुलसी राम बिछुरे कहो कैसी होय'॥

यह पद सुन हनुमान्‌जी परम प्रसन्न हो द्वितीय बार दर्शन करा देने की प्रतिज्ञा कर अंतर्ध्यान होगये फिर किसी दिन गोस्वामीजी वन में विचरते हुए क्या देखते हैं कि एक स्थान पर रामलीला बडे आनन्द पूर्वक चमत्कारी से होरही है साक्षात् मूर्तिमान् श्रीरामलक्ष्मण सीताजी विराजमान हैं। विभीषण के राज्याभिषेक का प्रबन्ध होरहा है यह अद्भुत लीला देख, अपने आश्रम की ओर आरहे थे कि मार्ग में एक परिचित ब्राह्मण से भेंट होजाने पर उसे रामलीला का वृत्तान्त कह सुनाया

ब्राह्मण हंसकर बोला कि महाराज ! आप यह प्रमत्त पुरुषों का सा कथन क्या कह रहे हैं क्योंकि रामलीला तो आश्विन के मास में होती है आज कल के दिनों में तो कदापि नहीं होती ब्राह्मण के मुख से ऐसी बातें सुन कुछ क्रोधित हो बोले कि मैं तो अभी दर्शन करके आरहा हूँ तुम्हें विश्वास नहीं होता तो तुमभी स्वयं चलकर देखलो निदान उसको साथ ले दिखलाने लेगये उस स्थानपर रामलीला का नाम भी न था यह देख गोस्वामी जी अत्यंत आश्चर्य में हुए और हनुमानजी के दर्शन करा देने की प्रतिज्ञाका स्मरण कर जान लिया कि श्रीमहाराज ने रामलीला के मिससे मुझे साक्षात् दर्शन दिया ऐसा विचारकर परम प्रेम में मग्न होकर पुनः श्रीराम के वारंवार दर्शन होने की उत्कंठा से अहर्निश प्रभु के भजन में ही तत्पर रहने लगे इसप्रकार इनका दृढ अनुराग देख करुणासागर श्रीकौशिल्यानंदन जी करुणा करके पयस्विनी नदी के किनारे रामघाट पर इन के निवासस्थान में अपने कोटिकाम कमनीयस्वरूप का प्रत्यक्ष दर्शन देते हुये जो योगीजनों को भी दुर्लभ ऐसे प्रभुको अपने निकट उपस्थित देख अतीव हर्षित हो चन्दन घिस घिस कर उससे प्रभु के अनूप स्वरूप को चर्चित करने लगे यह अलौकिक कौतुक अवलोकन करने के उत्साह से विमानारूढ देव समूह आय २ आकाश मार्ग में स्थित हुए और उस अपार शोभा को वारंवार दर्शन कर अत्यंत हर्ष को प्राप्त हुए, ऐसा देवतोंका मंगल समाज देख गोस्वामीजी ने यह दोहा पढा ।

दो०—रामघाट मंदाकिनी, भई विमाननभीर ।
तुलसिदासचंदनघिसैं,तिलकदेतरघुबीर ॥

इसप्रकार गोस्वामीजी साक्षात् अपने इष्ट देवका दर्शन पूजन कर उस अपार आनन्द को प्राप्त हुए कि जिसका वर्णन कौन करसके तदनन्तर आनन्दकंद श्री रामचन्द्रजी गोस्वामीजी को अपने स्वरूप का सर्वदा ध्यानमात्र से ही दर्शन होनेकी आज्ञा देकर यहाँही अंतर्ध्यानहोगए प्रभुके अंतर्हित होजाने पर गोस्वामीजी अपने को कृतकृत्यमान वहांही भक्तिभाव के आनन्द में निमग्न रहनेलगे । उससमय चित्रकूट के समीप एक दरिद्री ब्राह्मण रहता था वह एक दिन धन न होनेके कारण परमशोक से व्याकुल हो जलने के निमित्त चिताको लगाता हुआ यह देख लोगों ने उसे बहुत समझाया परन्तु उसका अज्ञान शांत न हुआ निदान यह समाचार गोसाईजी को विदित होतेही दयायुक्तहो इन्होने भी समझाया और द्रव्यकी अत्यंत निंदा करी इनके इसकथन को न मानकर उसने यह कवित्त पढा-

'द्रव्यहीते देव पूजा धर्म होत द्रव्यहीते ।
काम कर्म दाम विन पुरुष निकाम है ॥

विना द्रव्य दारा सुत भ्राता पितु सब अरि।
ऐसेही लगत विधिहू की गति बाम है ॥
विना द्रव्य दुर्जन न जीतो जाइ आदर न।
कादर कहावै सुधि बुधि सव खाम है ॥
विनाद्रव्य कहो यहां कौनकी दशा है नीकी।
मेरेजान आठौ याम द्रव्य ही में राम है ॥

उस ब्राह्मण का ऐसा दीनता पूर्वक कथन सुन धन के निमित्त उसकी अत्यंत हठ देखकर गोस्वामीजी ने उसे दरिद्र मोचनी शिला का दर्शन कराय वडा धनवान् कर दिया जिसके वंश में आजतक सव धनी होते हैं इसप्रकार चित्रकूट वास का अपार सुख अनुभव कर अपने इष्ट श्रीमहाराज रामचन्द्रजी की जन्मभूमि श्रीअयोध्याजी में आकर निवास करनेलगे। वृद्धों के द्वारा सुनागया है कि यहाँपर श्रीरामचंद्रजी ने स्वप्न में इनको ' रामचरित्र मानस , अर्थात् रामायण के बनाने की आज्ञादी तदनुसार इन्होंनें सं० (१६३१) चैत्र शुक्ल नवमी मंगलवारको इसके बनाने का आरम्भ किया जैसा कि इनके इस लेखसे विदित होता है-

चौ० 'संवत सोलह सौ इकतीसा। करौं कथा हरिपद धरिशीसा
नौमी भौमवार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकाशा

परन्तु पूरा आरण्यकाण्ड भी न बनाचुके थे इसी बीच अकस्मात् अयोध्या निवासी वैष्णवों से कलह होजाने के कारण वह मुक्ति पुरी श्रीकाशीजी को चलेआए और वहां असीगंग के तीर लोलार्ककुण्ड के निकट अपना निवास स्थान नियतकिया

जवसे गोस्वामीजी काशी क्षेत्र वासी हुए तव से वहाँ पर इन के बनाए भाषा रामायण की चर्चा चारों ओर फैलगई यह देख काशीपुरी के वास करने वाले पंडित लोग शास्त्रार्थ करने के निमित्त आए और बोले कि-वताइये भाषा का क्या प्रमाण है इस के उत्तर में इन्हों ने यह दोहा पढ़ा-

' हरिहर यश सुर नर गिरा, वर्णहिं संत सुजान।
हाँडी हाटक चारु चिर, रांधे स्वाद समान ॥

यह दोहा पढकर ऐसा बोले कि-मैं वृथावाद नहीं करता यह सुन काशीपुरी के पंडितों ने यह बात श्रीयुत मधुसूदनसरस्वतीदण्डी स्वामी जी से कही उन्हों ने गोस्वामीजी को अत्यंत धन्यवाद दे यह श्लोक पढा।

आनंद कानने ह्यस्मिन् तुलसी जङ्गमस्तरुः।

कविता मञ्जरी यस्य रामभ्रमरभूषितः ॥

'आनंद कानने' अर्थात् काशी जी में तुलसी चलने वाला वृक्ष है उसकी श्रेष्ठ कविता रूप मंजरी है और श्रीराम रूप भ्रमर से भूषित है।

इसप्रकार तुलसीदासजी की प्रशंसा स्वामीमधुसूदन सरस्वती जी के मुख से सुनकर प्रसन्न हो तुलसीदासजी से सब पण्डितोंने क्षमा मांगी।

एकसमय'अलखिया'पंथका एकसाधु'अलख२'पुकारताहुआ गोस्वामीजी के पास आ भिक्षा मांगता हुआ वारंवार यही कहता रहा कि बाबा अलख बोलोअलख,किंतु जब इन्होंने उसके वचनकी ओर विशेष ध्यान न दिया तब वह अत्यंत क्रोधितहो दुर्वचन कहने लगा यह देख स्वामीजी ने उसे शिक्षा करने के निमित्त यह दोहा पढा।

दो०--हम लखु हमहिहमार लख, हम हमार के बीच ॥
तुलसी अलखहिका लखै, राम नाम जपु नीच ॥

इसेसुन वह साधू अत्यन्त लज्जित हो नम्रतापूर्वकप्रणाम कर क्षमा मांगने लगा।

एक समय एक हत्यारा भिक्षा मांगता रामराम कहता हुआ गोस्वामी जी के आश्रम के निकट आ पहुंचा रामराम का शब्द सुन इन्हों ने उसे स्नान कराय तुलसी चरणामृत दे पवित्र कर पंक्ति में बैठाय भोजन कराया यह समाचार सुन काशीजी के पंडितों ने इस विषय का विचार करने और गोस्वामीजी को लज्जित करने के निमित्त सभाकरी और इन को सभा में बुलाय पूछने लगे। कि आपने इस हत्यारे को प्रायश्चित्त कराये विना कैसे पवित्र कर लिया यह सुन गोस्वामीजीने उत्तर दिया कि आपलोगों ने शास्त्रों के पढने में अत्यन्त परिश्रम कर वृथाही समय व्यतीत किया किन्तु शास्त्र प्रतिपादित परमतत्व अर्थात् राम नाम के अपार माहात्म्य को न जाना अस्तु।

अब आप लोगों को इस के पवित्र होने का निश्चय जिसप्रकार होसकै वह उपाय कहो ब्राह्मणोंने कहा यदि विश्वनाथ जी का नादिया इस के हाथसे किसी पदार्थ को खाय तो हमको पूर्ण विश्वास होजाय यह सुन गोस्वामी जी प्रसाद बनवाकर उसके हाथ से विश्वनाथजीके मंदिरमें लिवा लेगए नादिए के मुख में लगाते ही वह सब प्रसाद एक साथ ही भोजन करगया यह अद्भुत कौतुक देख ब्राह्मण समुदाय ने लज्जित हो इन के चरणों में प्रणाम करा।

एकदिन गोस्वामीजी रामजीके ध्यानमें थे कि इतने में भैरवजी महा भयंकररूप धारणकर इनके समीप भय दिखाने के निमित्त आए कि यह काशी छोडकर चले जायँ क्योंकि हमारा पूजन स्तुति आदि कुछ भी नहीं करते, तो क्या देखते हैं कि तुलसीदास जी के पीछे हनुमानजी खडे हैं, यह देख भैरवजी पीछे लौट गए इतने

में यह ध्यान से जागे तो आगे एक ब्राह्मण को खडा देख उससे पूछा कि–आप कौन हैं ? द्विजरूप धारी हनुमान्‌जी ने कहा कि, हम तुम्हारे पुराने मित्र हैं यह कह अपना रूपप्रकट किया गोस्वामीजी ने हनुमानजी को जान साष्टांग दंडवत् कर विनय की कि, महाराज ! आज क्यों दयाकी ? हनुमान्‌जी बोले आज तुम को त्रास दिखाने के लिये भैरव जी आए थे इस निमित्त में आया, वह मुझको देख कर चले गए अब नहीं आवेंगे, यह सुन इनके प्रेम के आंसू वहने लगे इतने में हनुमान् जी अन्तर्धान होगए।

एक दिन इनके राम मंदिरमें चोरी करनेके लिये चोर आए,तो वे जिधर चोरी की इच्छा से जाते थे वहां ही धनुषबाण धारण किये हुए श्रीराम लक्ष्मण जी दृष्टि पड़ते थे इसीप्रकार रात्रि व्यतीत होगई प्रातःकाल हुआ संत लोग उठे और उन चोरों की ओर देख उनसे पूछने लगे कि–तुम कौन हो ? उन्होंने अपने आने का प्रयोजन यथार्थ कह दिया क्यों कि– श्रीमहाराज के दर्शन से उनका अंतःकरण शुद्ध होगया था इसपर प्रसन्न हो गोस्वामी जी ने अतिप्रेम से यह सवैय्या पढ़ा।

अति सुन्दर रूप अनूप महा छवि कोटि मनोज लजावनिहारे।
उपमा न कहूं सुखमाके सुमंदिर मन्दरहू के बचावनि हारे॥
दिननायकहू निशिनायकहू मदनायक के मद नावनि हारे।
श्यामल गौर किशोर बने चितचोरनहू के चोरावनि हारे॥

निदान कि–वह सब चोर तुलसीदासजी के शिष्य होगए और स्वामी जी ने उन्हें ऐसा उपदेश दिया कि, जिस से वह चौर्य कर्म को त्याग रामानुराग में आरूढ होगए, एक दिन माघ के महीने में प्रातःकाल श्रीगोस्वामि जी गंगाजी के विषय कटि पर्यंत जल में खडे जप करते थे, उसी समय एक वेश्या आई और बोली कि–इस ब्राह्मण को देह कुछभी प्रिय नहीं है जो ऐसे अत्यंत शीत के समय कटि पर्यंत जल में निमग्न हो जप कर रहा है, यह बात इन्होंने सुनी, पीछे जप पूर्ण होने पर जल से बाहर हो थोडा जल वस्त्र आदि में छिडक धोती पहिरने लगे, उसमें से एक जल की बूंद वेश्या के ऊपर भी जापड़ी बूंद के स्पर्श होते ही उसके संपूर्ण पाप नष्ट होगये उत्तम ज्ञान, भक्ति, वैराग्य और दिव्य दृष्टि होगई, जिससे संपूर्ण यमयातना और नरक देखने लगी. निदान अत्यन्त भयभीत हो इनकी शरण आई इन्होंने ऐसा उपदेश दिया कि वह सब प्रपंच को त्याग कर और सर्वस्व दान कर राम भजन में लवलीन हो मुक्ति की अधिकारी होगई।

एक विद्वान् ब्राह्मण काशी जी के उसपार रहते थे उनकी भूमि गंगाजीके प्रवाह

में डूबगई अतएव जीविका नष्ट होजाने के कारण वह गोस्वामी जी की शरण आए. यह देख इन्हों ने गङ्गाजी की स्तुति करके उनको पहिले से तिगुनी भूमि निकलवादी. वह अति प्रसन्न हो इनको कोटिशः धन्यवाद देतेहुए अपने घर गए

काशीजी में एक बडे प्रतिष्ठित पण्डित रहते थे. उन्हों ने गोस्वामीजी की अपूर्व प्रतिष्ठा देख बड़ा संताप किया, और इनके पास आय विनय कर कहा कि आप यहां से निकलजायँ यह वर हमको दीजिए. इन्हों ने कहा बहुत अच्छा यह कह विश्वनाथजी के मंदिर में आय यह कवित्त पढा—

सुरसरि सेइ त्रिपुरारि हौं तिहारे ग्राम, रामहीं को नाम लै लै उदर भरत हौं। तुलसी न देवैं भोग लेत काहुसों न कछु, लिख्यो न भलाई भाल पोच न करतहौं॥ इतने हूँ पर जो करत जोर कर वाको, जोर देव दीन दरबार गुदरत हौं। पायकै उराहनो उराहनो नदीजै मोहिं, कालिकेश काशीनाथ कहे निवरतहौं॥

यह वचन कह चित्रकूट को चलदिए. इससे विश्वनाथजी का मन्दिर बन्द होगया और आकाशवाणी हुई, कि श्रीतुलसीदासजी निकलगए इससे मन्दिर बन्द है, उनके आये विना नहीं खुलैगा यदि नहीं लावोगे तो तुम सबको नष्ट करदूंगा ऐसी शिववाणी सुन वह लोग इनको अनेक प्रकार से विनती कर बुला लाये तो मन्दिर खुलगया, तब उन लोगों ने इनको बहुत कुछ धन्यवाद दिया.

काशीजी में एक अनीश्वर-वादी धनवान ब्राह्मण था उसका मरण होगया, उस की स्त्री मुर्दे के पीछे रोतीहुई श्मशानको जाती थी; तुलसीदासजी उसी समय गङ्गा स्नान करके आरहे थे उस स्त्री ने इन्हें देख दण्डवत करी तुलसीदासजी के मुखसे यह वचन निकलगया कि सौभाग्यवती रहो। यह सुन सब साथ के लोग बोले कि महाराज यह तो विधवा हुई है और यह इसीका पति है। जिसे हम लिये जारहे हैं तब गोसाईंजी ने अपना वाक्य सत्य करने को भगवान् की स्तुति की और उस मुर्दे के मुखमें थोड़ासा गङ्गाजल डालदिया तब वह जीवित हो उठ बैठा और उसी दिन से रामचरण में अनुराग करनेलगा और साधु महात्माओं की सेवा करतारहा।

जब से तुलसीदासजी ने उस ब्राह्मण को जिलाया तब से सहस्रों मनुष्य नित्यदर्शनको आने लगे यहांतक भीड होनेलगी कि एक क्षणभर का भी अवकाश न मिले अतएव ये एक गुफा में जा बैठे जब बहुत मनुष्य इकट्ठे होते तब दर्शन देते थे उस समय में एक गृहस्थ के तीन लडके इनके परम भक्त थे उन्हों ने तीन दिनतक दर्शन न पाने पर प्र

हुआ तब इन्हों ने श्री रामजी का चरणोदक उनके मुख में डालदिया डालते के साथही वे तीनों लड़के उठके खडे होगए और इनके चरणों पर गिरपडे, इन्होंने आशीर्वाद दे उन्हें कृतार्थ किया.

एकसमय भैरवनाथजी ने विचारा कि तुलसीदासको रामभक्ति का वडा अभिमान है और मुझे तो कुछभी नहीं मानते इन्हें अपना प्रभाव दिखाऊं ऐसा विचारकर उनकी भुजामें अत्यन्त पीड़ा प्रकट की, तब गोसाईंजी ने हनुमानवाहुक बनाया जिससे वह सब पीर स्वप्नकी नाईं मिटगई, और स्वप्न में श्रीविश्वनाथजी ने गोसाईंजी को सूचित किया कि कुछ भैरवकीभी स्तुति बनावो क्योंकि यह मेरे मुख्य गण हैं तब गोसाईंजी ने भैरवजी की भी स्तुति बनाई, जैसा कि विनय पत्रिका में लिखा है।

भीषणाकार भैरव भयंकर भूत प्रेत प्रमथाधिपति विपति हर्त्ता।
मोह मूषक मार्ज्जार संसार भयहरण तारणतरण अभयकर्त्ता॥

इत्यादि अनेक पद भैरवजी की प्रार्थनामें गोसाईंजी ने लिखे हैं,

एकदिन एक वैश्यने गोसाईंजी से प्रार्थना कर कहा कि, मैं श्रीरघुनाथजी का दर्शन करना चाहताहूं, गोसाईंजी बोले कि रामजीका दर्शन तो कोटि जन्ममें भी होना दुर्लभ है, सहज नहीं, तब उस वैश्य ने कहा कि कोई उपाय तो कृपा करके इसदासको बतलाही दीजिए गोसाईंजी बोले कि एक उपाय है कि भूमिमें एक वरछी गाड़दो और वृक्षपर चढ दृढ़ विश्वास कर उसपर कूदो, इसप्रकार दर्शन कदाचित् होजाय तब वैश्यने जङ्गलमें जाकर यही किया, पर मरने के भयसे वृक्षपर से कूदा नगया यह कौतुक एक क्षत्री खड़ा हुआ देख रहाथा उसने वैश्य से संपूर्ण वृत्तान्त पूछा और फिर सुनकर उसे कुछ धन देकर कहा कि तुम उतर आवो और अपना व्यापार करो वणिक ने दृढ़ विश्वास न होने के कारण क्षत्रिय के वचन मानलिए और धन लेकर चलागया, क्षत्रिय ने विचारा कि तुलसीदासजी की वाणी कदापि मिथ्या नहीं होगी, यह विचार दृढ विश्वासपूर्वक वृक्षपर चढ ज्योंही वरछी पर कूदा कि, बीचमें ही श्रीरघुनाथजी ने उसे रोक लिया और साक्षात् दर्शन दिया और संपूर्ण संसार में तुलसीदासजी का निर्मल यश छागया जैसा रामायण के उत्तर काण्डमें कहा है।

कौनिहुँ सिद्धिकि बिन बिश्वासा, बिनुहरि भजन न भवभयनाशा।

जब गोसाईंजी की यह कीर्ति अनेक प्रकार से दिल्लीके बादशाह ने सुनी, तो अपने मुख्य मंत्री को भेजकर उनको प्रार्थना पूर्वक वडे आदर के साथबुलाया और कहा कि आप कुछ करामात दिखाइये इन्होंनेकहा कि मैं सिवाय रामनामके और कोई करामात नहीं जानता वार २ बादशाह के प्रार्थना करनेपरभी इन्होंने

कुछ चमत्कारी न दिखाई तब बादशाहने क्रोधितहो इन्हें कारागारमें भेज दिया और कहा कि जबतक कुछ करामात न दिखाओगे तबतक न छूटने पावोगे तब कारागारमें प्राप्त होकर श्रीहनुमानजी की स्तुति प्रारम्भ करी–

स्तुति–हनुमानजी की ।

ऐसी तोहिन बूझिए हनुमान हठीले । साहेब कहूँ न रामसे तोसें न उसीले ॥ तेरेदेखत सिंहके शिशु मेंढकलीले । जानतहौं कलि तेरेऊ मनु गुणगण कीले ॥ हाँक सुनत दशकंठके भए बंधन ढीले । सो बलगयो किधौं भये अब गर्व गहीले ॥ सेवककोपरदा फटे तुम समरथ शीले । अधिक आपुते आपुनो सुनमानसहीले ॥ साँसति तुलसीदास की लखि सुयश तुहीले । तिहूँकाल तिनको भलो जे राम रँगीले ॥

जब यह पद बना चुके तब अकस्मात् महा तेज प्रताप सहित श्रीहनुमानजी प्रकट भए और उन के साथ असंख्य बानर सेना भी उत्पन्न हुई और किले और महल के कँगूरों पर चढगई और चारों ओर बडा उपद्रव मचाने लगे, किवाडों को तोडने लगे, बुर्जों को गिराने लगे, इन बन्दरों के उत्पात का वर्णन प्रियादासजी इस प्रकार लिखते हैं ।

पद-ताहिसमै फैलगये,कोटि कोटि कपिनये ।
लोचें तनखैंचैं चीरभयो योंविहालहो ॥
फोरेंकोट मारें चोट, कियेडारैं लोट पोट ।
लीजै कौन ओट जानि, मानो प्रलयकाल हो ॥

यह दशा देख बादशाह अत्यंत व्याकुल हो गोसाईंजी के चरणों में आगिरे और बारंबार अपराध क्षमा कराकर उपद्रव शांति के अर्थ अनेक प्रकार से प्रार्थना करीं तबतो गोस्वामी जी ने प्रसन्न होकर यह पद बनाया ।

'मंगल मूरति मारुत नंदन, सकल अमंगल मूलनिकंदन ॥
पवन तनय संतन हितकारी, हृदय विराजत अवध विहारी ॥
मात पिता गुरु गणपति शारद, शिवा समेत शंभु शुक नारद ॥
चरण बन्दि बिनवों सबकाहू, देहु रामपद नेहु निबाहू ॥

बन्दौ राम लषण वैदेही जे तुलसी के परम सनेही ॥

इस पद को सुन हनुमानजी नें प्रसन्नहो अपनी भयंकरी माया सब शांति करदी तब बादशाह ने प्रसन्न होकर तुलसीदास जी को आदर पूर्वक प्रार्थना कर और अनेक रत्न हीरे सुवर्ण आदि करोडों रुपयों की संपति भेंट करी और कहाकि कृपा करके इसको ग्रहण करिये और परमार्थ के निमित्त साधु सेवा आदि में इसको खर्च करिये तौ मैं अपने को कृतार्थ मानूँगा तब तुलसीदासजी ने कहा कि- हमें इस संपत्ति से क्या प्रयोजन है और निम्न लिखित दो दोहे पढे ।

तीन टूक कौपीन में, अरु भाजी बिनलौन ।
तुलसी रघुवर उर बसैं, इंद्र बापुरो कौन ॥
अर्व खर्वलौं द्रव्य है उदय अस्तलौं राज ।
तुलसी एक दिन मरण है, फिरि आवै केहि काज ॥

इतना कह वह धन ग्रहण न किया तब बादशाह के द्वितीयवार प्रार्थना करने पर यह आज्ञा करी कि यह स्थान श्रीहनुमानजी के चरणकमलों से पवित्र हुआ है सो यह अब तुम्हारे रहने योग्य नहीं है यह सुनकर बादशाह उस स्थान को त्याग यमुना के तटपर अपने पुत्र के नाम से शाहजहाँबाद बसाय कर उसमें वास करने लगे सो अबतक दिल्ली शाहजहाँनाबाद कहा जाता है और चलती समय तुलसीदासजी से बादशाह ने यह प्रार्थना करी कि कभी कभी कृपा करके दर्शन दिया कीजिये ।

कहते हैं कि - दिल्ली में ही तुलसीदासजी और सूरदासजी का समागम हुआ दोनों एक स्थान में बैठे थे, वहां एक मतवाला हाथी बादशाह का छूटगया सूरदास जी तो यह कहकर चलदिये कि हमारे नंदलाल तो बहुत बालक हैं वह डरेंगे, और तुम्हारे देव तो रघुवंश शिरोमणि धनुष धारी हैं तुम्हैं क्या डर है तुम बैठे रहो गोसाईं जी बैठेरहे, वह हाथी इन्हीं गोसाईंजी की ओर झपटा, अकस्मात् उसके मस्तक में एक बाण लगा, और वह हाथी तुरंत मरगया, इसप्रकार गोसाईंजी की महिमा सर्वत्र प्रकाशित हुई ।

वहां से चलकर तुलसीदासजी अपने स्थान को आरहे थे, कि मार्ग में एक मंगरू अहीर मिला और दूध दही ला आगे रख दण्डवत् कर बोला, हे महाराज ! जैसे श्रीरामजी ने वन में कोल भिल्लों के फल, मूल, दल ग्रहण किये थे वैसे आप भी इसे ग्रहणकर मुझे कृतार्थ करो गोस्वामीजी ने प्रसन्न हो कहा उन्हीं रामजी का भजन किया करो, और दूध दही ले लिया तब से वह अहीर अति ही रामोपासक हुआ कि-जिस ने भक्ति मार्ग चलाया है, उसके वंश वाले आज दिन तक रामभक्त होते चले आते हैं ।

तत्पश्चात् गोस्वामीजी वृन्दावन पहुँच कुछकाल रामघाट पर ठहरे, इतने में ब्रह्मचारी, गृहस्थ वानप्रस्थ, सन्यासी, और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, साधु संत इत्यादि सब लोग इनके पास आने लगे, यह देख इन्हों ने सबसे "जयराम, सीताराम" किया, परन्तु वे लोग कृष्णोपासक थे इससे आदरपूर्वक उन्होंने इनको यथार्थ उत्तर न दिया, और न "राम राम" किया इसपर इन्हों ने यह दोहा पढ़ाः—

दो०—राधे२ रटत हैं, आक ढाक अरु कैर।
तुलसी व्रजके लोगते, कहा रामते बैर॥

यह सुन वृन्दावन के महंत ने कहा कि रामजी तो चौदह कलाओं से हैं, और श्रीकृष्णचन्द्रजी पूर्णावतार हैं इसपर प्रमाण भागवत में कहा है—

'अन्येचांशकलाः पुन्सः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्'

अर्थ—अन्य अवतार अंश और कलाओं से हैं और श्रीकृष्ण तो स्वयं भगवान् हैं यह सुन श्री गोस्वामीजी ने यह दोहा पढ़ा—

दो०—जो जगदीश तो अतिभलो, जो महीश बड़भाग।
तुलसी चाहत जन्मप्रति, रामचरण अनुराग।

यह सुन सब लोग इनको अत्यन्त रामोपासक जान प्रसन्न हो बोले कि महाराज! आप कृष्ण के नित्य लीला विहारी के स्थान कुञ्जलता भवनों में चलिए इन्हों ने कहा कि यह रामघाट भी कृष्णभूमि ही है इससे यहां से जाना न होगा फिर उन्हों ने अपने २ स्थानों से गोस्वामीजी के पास भोजन की सामग्री अर्थात् घृत शर्करा, मैदा, दूध दही, इत्यादि भोग के निमित्त भेजदिए. परन्तु गोस्वामीजी ने सब सामान लौटादिया और यह कहा कि हम जूठे पदार्थ नहीं खाते, तब उन्हों ने बाज़ारसे नये सब पदार्थ मोल लेके भेजदिए, उन्हें भी गोस्वामीजी ने यही कहकर फेरदिया तब वे लोग इनके पास आये, और बोले कि, आपने हमारे पदार्थों को जूठे और अशुद्ध बनाकर लौटादिया इसका क्या कारण है? इन्हों ने कहा कि आपलोग जहांसे यह सामान लाये हैं वहां यदि हमारे साथ चलें तो हम प्रत्यक्ष दिखावें।

निदान उन वृन्दावन वासी लोगों में से जहाँ से जो सामान लाया था, उस ने वह स्थान बताया, तब इन्हों ने कहा कि देखो, तो सब लोग देखते क्या हैं कि प्रत्येक दुकानपर बालकृष्णरूप भगवान् हाथों से काढ काढके सब पदार्थ खारहे हैं, यह देख सब लोग प्रेम में मग्न हो इनके चरणों पर गिरपड़े और इन्हों ने रामघाट पर आकर यह दोहा पढ़ाः—

दो०—तुलसी मथुरा राम हैं, जो जानें करि दोय।
युग अक्षरके मध्य में, ताके मुख में सोय॥

तदनंतर एक समय श्री गोस्वामीजी नाभाजी से मिलने के लिए उनके आश्रम में गये, उन्हों ने गोस्वामीजी का बड़ा सत्कार किया और संतसमाज में उच्च आसन पर स्थित कर विधिपूर्वक पूजन कर स्तुति करीः—

छन्द—छप्पय—त्रेता काव्य निबंध सहस चौबिस रामायण।
इक अक्षर उद्धरै ब्रह्महत्यादि परायण॥
अब भक्तन सुखहेत बहुरि लीला विस्तारी।
रामचरित रसमत्त अटल निशिदिन व्रतधारी॥
संसार पारके पारकहँ सुगमरूप नौका लयो।
कलि कुटिलजीव निस्तारहित,वाल्मीकि तुलसीभयो॥

इसे सुन गोस्वामीजी ने कहा कि-महाराज! यह पदवी गुप्त रखिये पीछे सन्तमण्डली के साथ मदनगोपालजी के मंदिर में दर्शन को गए, वहाँ सब संतों ने तो प्रणाम किया, परन्तु तुलसीदासजी ने दण्डवत् न की और यह दोहा पढ़ाः—

"काह कहौं छवि आपकी, भले बने व्रजनाथ।
तुलसी मस्तक तब नवै, धनुषबाण लो हाथ॥

यह सुन श्रीकृष्ण भगवान् ने मुरली मुकुट छिपाकर धनुषबाण हाथ में ले राम रूपका दर्शन दिया, यह देख श्रीगोस्वामीजी ने यह दोहा पढ़ा—

क्रीटमुकुट माथे धरयो, धनुषबाण लिये हाथ।
तुलसीजनके कारणे, नाथ भये रघुनाथ॥

यह लीला देख सन्तों ने इनको कोटिशः धन्यवाद दिया और भक्तशिरोमणि जाना।

एकसमय ज्ञानगुदड़ी में कथा होती थी, कोई २ महन्त ऊँचे आसन पर बैठेथे गोस्वामीजी जबगये तो इन्हें भी आसन पर बैठाने लगे तब यह भूमिही पर बैठ गए, और बोले कि जो कथा सुनते में पान खाते हैं वह मल भक्षण करते हैं, जो ऊँचे आसनपर बैठते हैं वे अर्जुन वृक्ष होते हैं जो सोते हैं वे अजगर होतेहैं जो वाचक के समान आसन पर बैठते हैं वे गुरु तल्पग की समान पाप के भागी होते हैं जो निन्दा करते हैं वह सौजन्म तक श्वान होते हैं, जो विवाद करते हैं वे गिरगिट होते हैं, जो कभी कथा नहीं सुनते वे शूकर होकर नरक में जाते हैं, और जो

कथा में विघ्न करते हैं वहभी नरक भोग कर शूकर होते हैं, इससे यह दोष छोड़ कर सबकोई कथासुनो तुलसीदासजीके वचन मान सबने ऊँचे सिंहासन त्यागदिये

एक समय मीराबाई ने गोसाईंजी को पत्र लिखा कि-मेरे पति आदि घर के लोग भजन तथा साधु सेवा आदि में विघ्न करते हैं मुझे अब क्या कर्तव्य है,उसका उत्तर कृपा करके दीजिये इस पर तुलसीदासजी ने यह पद लिख भेजा कि-

जाके प्रियन-रामवैदेही। सो त्यागिये कोटि वैरीसम यद्यपि परम सनेही ॥ तज्यो पिता प्रह्लाद विभीषण बन्धु भरत महतारी। गुरुवलि तज्यो कंत व्रजवनितन भये सब मंगलकारी ॥ नातो नेह रामको मानिय सुहृद सुसेव्य जहाँलौं। अंजन कहा आँख जेहि फूटे बहुतक कहौं कहाँलौं ॥ तुलसी सोइ सबभाँति परमहित पूज्य प्राणते प्यारो। जातेहोय सनेहरामपद येतो मतो हमारो ॥

इस पत्र को पाकर मीराजी अत्यन्त वैराग्य युक्त हो तीर्थ यात्रा करने को चली गई।

कहते हैं कि नवाव खानखाना से भी इनका स्नेह था एक गरीव ब्राह्मणकी कन्या का विवाहथा उसने तुलसीदासजी को बहुत घेरा तब गोस्वामीजी ने एक पत्र पर आधा दोहा लिखकर ब्राह्मण को दिया कि इसे खानखाना पर लेजाओ।

सुरतिय नरतिय नागतिय, सवचाहत असहोय।

खानखाना ने यह देख कर ब्राह्मण को बहुत सा धन दे दोहे की पूर्ति कर भेज दिया कि-

गोदलिये हुलसी फिरै, तुलसी सों सुतहोय ॥

कहते हैं कि आमेर के महाराज मानसिंह और उनके भाई जगत सिंह प्रायः गोसाईंजी के पास दर्शन को आया करते थे। एकदिन एक मनुष्य ने गोसाईंजी से पूछा कि महाराज! पहिले तो आपके पास कोई भी नहीं आताथा और अब ऐसे २ बड़े लोग आपके यहां आते हैं, इसमें क्या भेद है? गोसाईंजीनेकहा;

'लहै न फूटी कौड़िहू, कोचाहै केहि काज।
सो तुलसी महँगो कियो, राम गरीब निवाज ॥
घर २ माँगे टूक पुनि, भूपति पूजे पाय।
ते तुलसी तब रामबिन, ते अब रामसहाय ॥

तात्पर्य यह है कि जब श्रीराम जी की शरण में नहीं प्राप्त हुआ था तब घर २ टूक

माँगे था और कोई फूटी कौड़ी को भी नहीं बूझे था और जब श्रीरामजी महाराज की कृपा हुई तो राजा लोग भी पाउँ पूजने लगे, यह सुन वह परम संतोष को प्राप्त हो श्रीराम भक्ति में दृढ विश्वास करने लगा।

घर छोडने के पीछे एक समय स्त्री ने यह दोहा गोसांईजी को लिख भेजाः—

कटि की खीनी कनकसी, रहत सखिनसँग सोय।
मोहिफटे को डरनहीं, अनत कटे डर होय॥

अर्थात्—मैं कमर की क्षीण सुवर्ण के सदृश हूँ और सखियों के साथ पडरहती हूँ मुझ से मोह फट जाने का तो मुझे डर नहीं है, परन्तु इस बात का बहुत डर है कि आप वहां किसी और के फन्दे में नंपड़जाओ इसके उत्तर में तुलसीदासजी ने यह दोहा लिखाः—

कटे एक रघुनाथसँग, बाँध जटा शिर केश।
हमतौ चाखा प्रेमरस, पत्नी के उपदेश॥

अर्थात्-शिर पर जटा बाँध कर हमतो केवल श्रीरघुनाथजी के फन्द में पड़े हैं, अपनी स्त्री के उपदेश से हमने तो यही परम सार समझकर प्रेमरस चाखा है, इस उत्तर के आने से श्रीरघुनाथजी के चरणों में अपने पति का अटल प्रेम देख कर स्त्री अत्यन्त आनंद को प्राप्त हुई और बड़ी प्रशंसा करने लगी कि मेरे धन्य भाग हैं कि जो मेरे पति का श्रीराम भक्ति में ऐसा दृढ विश्वास होरहा है-

कहते हैं कि--जब महावीरजी ने परम मनोहर राम चरित्र रामायण रचना कर अपने नखों से शिला पर लिखी तब वाल्मीकिजी ने विचारा कि इस विचित्र हनुमानजी की रामायण के आगे मेरी रचना करी हुई रामायण का आदर नहोगा इस कारण वाल्मीकिजी ने हनुमानजीकी प्रार्थना करी तब हनुमानजी प्रसन्नहोकर बोले कि तुम्हारा मनोरथ क्याहै-तब वाल्मीकिजी ने प्रार्थनापूर्वक कहा कि इस अपनी रची हुई रामायण को समुद्र के अर्पण कर दीजिए हनुमानजी ने स्वीकार कर कहा कि इसको तो ऐसाही करेंगे, परन्तु कलियुग में एक तुलसीदास नामक ब्राह्मण की बुद्धि में प्रवेश कर जिह्वाद्वारा भाषा रामायणकी अति विचित्र रचना करूँगा कि जिससे तुम्हारा यह ग्रंथ अस्तप्राय होजायगा इसीकारण हनुमानजीने रामायण के विषय प्रायः तुलसीदासजी की बहुत सहायता करी- जैसे कि जब तुलसीदासजी बालकाण्ड में धनुष यज्ञ का चरित्र लिख रहेथे तब उन्होने यह सोरठा लिखा-

शङ्कर चाप जहाज, सागर रघुवर बाहुबल।
बूड्यो सकल समाज-

बस, इन तीन पदों के लिखने के पीछे बुद्धि रुकगई कि-जब समाज डूब चुका तब आगे को लिखना क्या रहा ? क्योंकि-सकल समाज कहनेसे तो श्रीराम लक्ष्मण विश्वामित्र आदि भी आगये कोई बात समझ में नहीं आई इसी सोचविचार में लिखना पढना छोड़ शौचादि क्रिया की निवृत्ति के लिये बाहर चलेगए पीछेसे हनुमानजी ने आकर चौथा चरण लिखा 'चढ़जे प्रथमहिं मोह वश' जब तुलसीदासजी ने आकर यह चरित्र देखा तब आनन्द में निमग्न होगए और आगे को रामचरित्र वर्णन करने लगे—और भी अनेकबार हनुमानजी ने गोस्वामीजी को सहायता दी है।

एकसमय काशीजी में दक्षिण से सब शास्त्रों के जानने वाले बडे भारी एक पंडित आये उन्होंने काशी के पण्डितों से शास्त्रार्थ करने के निमित्त संस्कृत में पत्र भेजा तब सम्पूर्ण पण्डितों ने एकत्रहो सभाकर पत्रको देखा तो वह पत्र भलीप्रकार समझ में नहीं आया तब पण्डित लोग विचार करने लगे कि-जब उनका पत्रही ऐसा कठिन है तो उनसे शास्त्रार्थ करना तो कैसे बनेगा ऐसी सब शङ्का कररहेथे कि-उसी समय तुलसीदासजी भी पण्डितों के समीप गए और उनको शंका युक्त देख कर पूछा, पण्डितों ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया तब गोस्वामीजी बोले कि-यदि आप लोगों की आज्ञा होतो हम जाकर उनसे कुछ प्रश्न करैं तब पण्डितों ने कहा कि यहाँ कुछ भक्ति भजन का काम तो है नहीं यहाँ बडे शास्त्रों का विचार है जब हमी सम्पूर्ण शास्त्रों के जानने वाले शंकित होरहे हैं तो आप उनसे क्या प्रश्न कर सकैंगे—तब तुलसीदासजी ने कहा कि-आपका विचार ठीक है परन्तु हमारे जाने में कुछ हानि भी नहीं है, क्योंकि-यदि हम परास्तभी होजायंगे तो भी हमें ग्लानि न होगी यह वचन तुलसीदासजी से सुन पण्डितों ने कहदिया कि-यदि आप की इच्छा है तो होआइये, तब दक्षिण से आये हुए पण्डित के पास तुलसीदासजी गए और उनसे मिलकर प्रणामादि कर कहा, कि-यदि आप अप्रसन्न नहों तो हम आपसे कुछ प्रश्न करैं उक्त पंडितजी ने कहा कि जिस शास्त्र में आपकी इच्छाहो प्रश्न करिये हम उत्तर देंगे, तब गोसाईजी ने यह प्रश्न किया कि-आप समझकर पढे या विद्या पढकर समझे, इस प्रश्नको सुन और तात्पर्य विचार कर दक्षिणी पण्डित बोले कि-क्या ! गोस्वामितुलसीदास आपही का नाम है तब उन्होंने कहा कि-हाँ ! तब पंडित बोले कि-महाराज ! न तो हम समझ कर पढे थे, और न विद्या पढ के समझे, परन्तु अब आप महात्माके दर्शन से सब यथार्थ समझ गए। गोसाईजी के प्रश्न का तत्पर्य्य यह है, कि-जब पूर्व यथार्थ ज्ञानथा तो पढने की आवश्यकता क्या थी, अथवा विद्या पढ के समझते तो ईश्वरका यथार्थ ज्ञान होजाता तो फिर आडंब पूर्वक शास्त्रार्थ विवाद करनेकी क्या आवश्यकताथी, क्योंकि-कहाभीहैकि-

श्लोक–

विद्या विवादाय धनंमदाय, शक्तिःपरेषां परपीडनाय ।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

अर्थात्–मलिन अन्तःकरण वालों को विद्या पढना विवादके निमित्त, और धन मद का वढाने वाला होता है और शक्ति पराये को पीडा के अर्थ होती है– सत्पुरुषों के यह रीत विपरीत होती है, क्योंकि–विद्या ज्ञानके अर्थ और उनका धन परमार्थ के निमित्त और वल पराई रक्षा करने के अर्थ होता है, इसी तात्पर्य्यको समझकर वह दक्षिणी पंडित सम्पूर्ण शास्त्र के अभिमान को त्याग अति नम्रता पूर्वक तुलसीदासजी को प्रणाम कर परमेश्वर के भजन में तत्पर हो विरक्त होगए।

ऐसे गोसाँई जी के और भी अनेक अद्भुत चरित्र हैं सम्पूर्णता करके कौन वर्णन करसके है, गोस्वामी जी की वनाई हुई निम्नलिखित पुस्तकों का प्रचार अवतक हो रहा है–१ कवित्तरामायण. २ गीतावली. ३ दोहावली. ४ विनयपत्रिका. ५ राम शतसई. ६ कृष्णावली. ७ रामलला. ८ रामनहछू. ९ वैराग्यसंदीपिनी. १० वरवा-रामायण. ११ पार्वती मंगल. १२ जानकीमंगल. १३ रामशकुनावली. १४ चौपाई रामायण. १५ संकटमोचन. १६ हनुमानवाहुक. १७ रामशलाका. १८ कुंडलिया-रामायण. १९ कडकारामायण. २० रोलारामायण. २१ झूलनारामायण. २२ छप्पय-रामायण इत्यादि ग्रन्थ मुमुक्षुपुरुषों के निमित्त संसाररूपी समुद्र के तरने को नौकारूप रचके और इस असार संसार को अनित्य जान के त्याग करनेकी इच्छाकरी. तव सन्तजनों को अपने ग्रन्थ पाठ का उपदेशादि करके काशीजी में असी गंगा के किनारे नेत्र मूंदकर यह दोहा कहा–

राम नाम यश वरणिके, भयो चहत अव मौन ।
तुलसी के मुखदीजिए, अवही तुलसी सौन ॥

उससमय अपने इष्ट श्रीरामचन्द्रजी के ध्यान में लीन होके शरीर त्याग दिया और एक परमप्रकाशवान् ज्योति सी निकलकर आकाशमें लीन होगई–

उससमय का यह दोहा है–

सम्वत् सोलहसौ असी, असीगङ्गके तीर ।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर ॥

इतिश्रीमद्गोस्वामि तुलसीदासजी का जीवनचरित्र समाप्त.